बच्चों के चित्रः बड़ों की फिक्र

पल्लव

बच्चों के चित्रों और उनके लेखन के संबंध में हमारे पास क्या कोई पैमाने हैं? हम बच्चों के बनाए किन चित्रों को देखकर तारीफ करें और क्या करने/न करने को कहें? शांति निकेतन से जुड़े कलाविद् और शिक्षाविद् देवीप्रसाद ने इस विषय पर बहुत काम किया था। उनका मानना था कि कुछ अनुभव ऐसे होते हैं जो केवल चित्रों के द्वारा ही प्रकट किए जा सकते हैं। दूसरी बात यह कि बच्चों की बुनियादी भाषा आकार की भाषा होती है इसलिए चित्रकला उनके आत्म-प्रकटन के लिए बहुत अच्छा माध्यम है। देवीप्रसाद की यह बातें अभी इसलिए आवश्यक लग रही हैं क्योंकि बच्चों की एक पत्रिका ने अपना पूरा अंक बच्चों के बनाए चित्रों पर केंद्रित किया है। यह पत्रिका है 'चकमक', जो नए-नए प्रयोगों में विश्वास रखने वाली पत्रिका है। बहुत दिन नहीं हुए जब चकमक ने एक अनूठा अंक निकाला और उसमें यह काम किया कि चकमक में छपे बच्चों के बनाए चित्रों में से कुछ छांटकर कला के जानकार लोगों के पास भेजे और उनसे आग्रह किया कि इनके बारे में कुछ कहें, टिप्पणी करें। चकमक के हर अंक में बच्चों के बनाए चित्र छपते हैं जो देश भर से आते हैं और कई बार बेनाम भी। यह विचार ही सुन्दर है कि किसी के भीतर यह भरोसा जगाया जाए कि वह भी चित्र बना सकता है, कविता लिख सकता है, अभिनय कर सकता है और वह (किसी) अगर बच्चा है तो और भी सुन्दर बात है। क्योंकि बच्चे की कला को हमारे समाज में गंभीरता से नहीं लिया जाता। उनके अनगढ़ चित्रों को फालतू समझकर माता-पिता कुछ अच्छे चित्रों के अनुकरण के लिए प्रोत्साहित करते हैं। जबकि देवीप्रसाद जैसे विद्वान शिक्षाविद् का मत था कि 'मां-बाप को सिखाना होगा कि स्वाभाविक कला धर्म क्या है और उनका विकास ठीक ढंग से उनकी स्वाभाविक कला सीढ़ी के द्वारा ही हो सकता है।' जो जिद्दी माता-पिता सयानों की तरह 'अच्छे' चित्रों को बनाने या अनुकरण पर जोर देते हैं उनके लिए देवीप्रसाद 'प्रौढ़ शिक्षा' का उपाय बताते हैं। चकमक ने यह अनूठा काम किया कि बच्चों के चित्रों पर बड़ों से लिखवाया और यह संदेश देने की कोशिश की है कि जिसे आप व्यर्थ का रेखांकन या रंग छिड़कना समझ रहे हैं वह किसी बच्चे के विकास के लिए कितना महत्त्वपूर्ण है। पढ़ाई-लिखाई की पारंपरिक पद्धति से हटकर यहां उन अबोध कलाकारों (?) पर चकमक ने भरोसा दिखाया और उन्हें छापने के साथ उन पर बात करना भी जरूरी समझा।

भूमिका के रूप में विख्यात कवि-कथाकार विनोद कुमार शुक्ल का आलेख है जिसमें वे लिखते हैं कि 'बच्चों के बनाए चित्रों को देखकर सोचता हूं कि वे किस तरह अपने देखने को सोचते हैं। ...बच्चे जो बनाते हैं वे गढ़ते नहीं हैं। यदि वे बनाते भी हैं तो अनगढ़ को बनाते हैं। क्या उनके वही चित्र सबसे अच्छे हो सकते हैं जो अधिक अनगढ़ हों?' इसके बाद लगभग तीस चित्रों पर विचार-विमर्श है, समीक्षा या आलोचना तो इसे नहीं कह सकते। एक-एक चित्र पर तीन या चार लोगों ने लिखा है, थोड़ा-सा और ज्यादा-ज्यादा भी। इन लोगों में प्रयाग शुक्ल, देवीलाल पाटीदार, चित्रकार अखिलेश, शिवकुमार गांधी, अरुण कमल, असगर वजाहत, गगन गिल, अशोक भौमिक, अशोक वाजपेयी, नरेश सक्सेना, मनोज कुलकर्णी, राजेश जोशी, प्रभु जोशी, पार्थिव शाह, ओमा शर्मा, रुस्तम सिंह, मदन मीणा, तेजी ग्रोवर, दिलीप चिंचालकर जैसे जाने-माने सृजनधर्मी हैं।

चुने गए इन चित्रों में अधिकांश मूर्त और कुछ अमूर्त हैं। एक चित्र जिसमें गाय या बकरी के पेट में बच्चा है और एक मनुष्य बच्चा उसे देख रहा है। साथ-साथ उसके थनों से झरता दूध बाल्टी में भर रहा है। गगन गिल ने लिखा, 'बच्चे ने एक अदृश्य का रहस्य जाना है। वह उसी को चित्रित कर रहा है- उसे मालूम है, मम्मी के पेट से ही बच्चा होता है! हर कला यही करती है- पहले किसी भेद का पता चलाती है, फिर तुम्हें बताने आती है।' यह चित्र हरियाणा के करेला के चंद्रपॉल दूहण ने बनाया था जो चकमक के अप्रैल, 1991 अंक के छपा था। फ्रांसिस कुमार ने लिखा, 'कितनी प्रेम से भरी दुनिया है जिसमे वो नन्हा बछड़ा आने वाला है- चंद्रपॉल और उसके परिवार के साथ वो पलेगा-बढ़ेगा।' मजे की बात है कि गगन गिल इसे बकरी और शिवकुमार गांधी गाय मान रहे हैं। सही तो है हम इसे गाय भी मानें और बकरी भी। बारिश के चित्र पर कवि अरुण कमल की टिप्पणी देखिए, 'इन चित्रों को देखकर लगा कि मैंने कितने लम्बे अरसे से वर्षा ऋतु को देखा नहीं। मैं तो भूल ही गया था। शायद मेरे भीतर भी जल घट रहा है। एक बच्चे की देह में सबसे ज्यादा जल होता है। एक बच्चा सबसे पहले और सबसे ज्यादा जल की तरफ दौड़ता है। इस विपुल पृथ्वी पर पानी गिर रहा है और कोई अरुणाचल से तो कोई गुजरात से उसे देख रहा है, अपने-अपने घरों से। एक पर्वत के पास से। एक समुद्र के पास से। पानी गिर रहा है। मैं भीग रहा हूं। पानी अभी थमा है। मैं अपनी लटें सहेज रहा हूं। जीवन बन रहा है। धारासार।' इन दो टिप्पणियों के मार्फत हम इस अंक की तासीर समझ सकते हैं और उस संभावना पर भी विचार कर सकते हैं जो कल्पनाशीलता के अद्‌भुत संसार में प्रवेश करने के लिए ऐसे प्रयोगों की सार्थकता सिद्ध करने वाली है।

इसी तरह नरेश सक्सेना की एक टिप्पणी है जो गुजरात की दस वर्षीया संजना के चित्र पर लिखी गई है। इस चित्र में मकानों की छतों से कुछ पतंगें उड़ती हुई दिखाई दे रही हैं। इनको उड़ाने वाली आकृतियां भी हैं लेकिन धुंधली और अस्पष्ट। सक्सेना लिखते हैं, 'लड़कियों को तो कोई पतंग उड़ाने नहीं देता। शायद इसलिए वे दृश्य में कहीं नहीं हैं। तो फिर लड़के कोई भी हों, संजना को इससे क्या मतलब कि पतंग के धागे किन हाथों में हैं। ...इस चित्र में लड़कों के आकारों का धुंधला होना और लड़कों का कहीं न होना भी कुछ कह रहा है?'

अंक में एक आलेख है 'चित्र का व्याकरण', जिसमें चित्रकारी से संबंधित परिप्रेक्ष्य (पर्सपेक्टिव) और संयोजन (कम्पोजीशन) के बारे में बताया गया है। इसके लेखक का नाम नहीं दिया गया है। ऐसे ही देवीलाल पाटीदार के एक स्वतंत्र आलेख 'चित्र में आवाजाई' में ओंकारेश्वर के मेले पर बने डी. जे. जोशी के दो चित्रों के बहाने रंगों, उनके संयोजन और चित्रकला माध्यम के वैशिष्ट्य पर बातें की गई हैं। आखिर में एक कला शिक्षक बी. वी. सुरेश ने समापन वक्तव्य जैसा लिखा है जिसमें उन्होंने इन चित्रों की व्याख्या और इन्हें चुनने को अनुचित माना है। उनका मत है, 'क्या यह बेहतर नहीं होगा कि उन्हें अकेला छोड़ दिया जाए और उनकी उस असाधारण दृष्टि को जो उन्होंने कागज पर उकेरी है, उसका आनंद लिया जाए? हम आखिर क्यों उनकी सहज अभिव्यक्ति और आजादी पर टिप्पणी कर उसकी मासूमियत भंग करें?' यह भी सोचने का एक ढंग हो सकता है अच्छा है कि चकमक ने इस नजरिए को भी आने दिया।

इस अंक में और भी सामग्री है जो आकर्षक और पठनीय है लेकिन हिन्दी में चित्रकला को नई पीढ़ी के करीब लाने और बड़ों को भी उसमें भागीदार बनाने की इस अनूठी और अद्वितीय पहल के चलते यह अंक यादगार माना जाएगा। ऐसे प्रयोगों का स्थायी महत्त्व होता है। ये प्रयोग परस्पर समृद्ध करने वाले होते हैं क्योंकि इनसे केवल बच्चे ही लाभ नहीं ले रहे।

चकमक का यह अंक अक्टूबर-नवम्बर, 2014 में प्रकाशित हुआ है और इसका मूल्य 75 रुपये है।

बालक कथाकार

आयुष राय दिल्ली के एक स्कूल की कक्षा तीन में पढ़ते हैं और उनकी दो किताबें विश्व पुस्तक मेले में आईं। 'टूटा खिलौना' और 'गीगी गिलहरी' नाम से आई दोनों पुस्तकें कहानी संग्रह हैं। पहले संग्रह में तीन कहानियां क्रमशः 'टूटा खिलौना', 'चिड़िया चुग गई खेत' और 'गब्बर शेर गया स्पा' हैं तो दूसरे में गीगी गिलहरी से जुड़ी पांच कहानियां हैं। आयुष की आयु और अनुभव को देखते हुए इन किताबों से कोई अतिरिक्त आग्रह रखना अनुचित होगा तथापि एक नन्हे लेखक के आगमन को देखने की उत्सुकता हमारे भीतर होनी चाहिए।

'टूटा खिलौना' आयुष की पहली किताब है और यहां उनकी देखी-जानी दुनिया के नैतिक दबाव महसूस किए जा सकते हैं। बच्चों को शरारती होने पर दंड मिलना, उन्हें आज्ञाकारी बनाने की शिक्षा देना और कर्तव्यबोध से भरना। इसके बावजूद स्वाभाविक उत्फुल्लता जिस कहानी में है वह है 'गब्बर शेर गया स्पा'। आखिर जंगल में रहने वाला गब्बर शेर स्पा क्यों नहीं जा सकता? स्पा जाने के बहाने गब्बर शेर में आई स्फूर्ति और जीवन के प्रति उत्साह अच्छा लगता है। देखिए तो आयुष ने क्या लिखा है, ''पिंटू लोमड़ बोला, 'सर इस पानी से आपका शरीर तरो-ताजा हो जाएगा और आप बहुत तेज दौड़ पाएंगे।' चिंकी खरगोश काला रंग लेकर आया और गब्बर के केश को रंग दिया।''

'गीगी गिलहरी' वाली किताब इस गिलहरी से जुड़ी कहानियों की शृंखला है जिसमें गीगी और कथा वाचक के संबंधों को देखना रोचक अनुभव है। कैसे वाचक की छत पर गिलहरी मिली और उसके लिए घर बनवाया गया और उसने धीरे-धीरे वाचक के जीवन में प्रवेश किया। गीगी की शैतानी, उसका रोना, उसका खो जाना सब इन कहानियों में आए हैं। इन किताबों का स्वागत करते हुए मन में एक ही विचार आता है कि काश हिन्दी प्रकाशकों के पास सचमुच योग्य संपादक होते। ◆

'टूटा खिलौना' एवं 'गीगी गिलहरी', लेखक-आयुष राय, ज्योतिपर्व प्रकाशन, गाजियाबाद, प्रत्येक का मूल्यः 30 रुपये।

लेखक परिचयः लगभग एक दशक से हिन्दी साहित्य का अध्यापन, हिन्दी की लघु पत्रिका 'बनास जन' के संपादक। संप्रतिः हिन्दू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में साहित्य के प्राध्यापक हैं।